International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 19-07-2026, Accepted: 18-08-2026, Published: 02-09-2026
Volume 12, Issue 3, 2026, Page No. 138-141

सुदामा पांडेय 'धूमिल' की कविता 'मोचीराम' और श्रम का सौंदर्यशास्त्र: एक विश्लेषण

दुर्गेश पाण्डेय[1], डॉ. ज्ञानेन्द्र मणि त्रिपाठी[2]
[1] शोधार्थी, हिन्दी विभाग, किसान पी. जी. कॉलेज, बहराइच, उत्तर प्रदेश, भारत
[2] शोध–निर्देशक, हिन्दी विभाग, किसान पी. जी. कॉलेज, बहराइच, उत्तर प्रदेश, भारत
DOI: https://doi.org/10.66856/ijhr.2026.12.3.12226

सारांश
सन् 1947 में भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता तो प्राप्त हुई परंतु देश की आम जनता, विशेषकर शोषित, वंचित, पीड़ित और श्रमजीवी वर्ग ने जो आजादी के स्वप्न देखे थे, वे शीघ्र ही छिन्न–भिन्न हो गए। तत्कालीन समाजवाद का ढांचा, पंचवर्षीय योजनाएँ और लोकतान्त्रिक संस्थाएँ समतामूलक समाज की स्थापना करने में पूर्णतः विफल रहीं। विषमता की खाई घटने के बजाय और बढ़ी। देश का किसान, मजदूर और फुटपाथ पर बैठकर हाड़–तोड़ मेहनत करने वाला आम आदमी खुद को ठगा हुआ महसूस कर रहा। राजनीति में वातानुकूलित कमरों के भीतर बैठकर जो नीतियां बनाई जा रही थीं, उनका सड़क के खुरदरे यथार्थ से कोई सीधा संबंध नहीं था। इसी ऐतिहासिक और सामाजिक अंतर्विरोधों के बीच 1960 के दशक के बाद हिंदी साहित्य में 'साठोत्तरी कविता' या 'समकालीन जनवादी कविता' का आंदोलन तीव्र हुआ। यह आंदोलन रोमानी कल्पनाओं, आध्यात्मिक रहस्यों, छायावादी सुकोमलता और अज्ञेयवादी व्यक्तिवाद के विरुद्ध एक तरह का काव्यात्मक विद्रोह था। इस विद्रोह के सबसे प्रखर, तीखे, आक्रामक और बेबाक कवि बनकर उभरे–'धूमिल'

मूल शब्दः जनवाद, लोकतंत्र, जनतंत्र, श्रम, समाजवाद, गरीबी, सौंदर्यशास्त्र, श्रमजीवी, समकालीन, व्यंग्यात्मकता, समानता, सामाजिक यथार्थ, सर्वहारा

धूमिल की काव्य–दृष्टि रूमानी पर्दों को फाड़कर यथार्थ को उसके नग्न और भयावह रूप में देखने और दिखाने का साहस रखती हैं। उनका प्रथम काव्य–संग्रह 'संसद से सड़क तक' (1972) हिंदी कविता के इतिहास में एक मील का पत्थर साबित हुआ है। इस संग्रह की सबसे चर्चित, विचारोत्तेजक और शिल्पगत रूप से अद्वितीय कविता है—'मोचीराम'। यह कविता केवल समाज के एक हाशिए पर रहने वाले दलित चरित्र का रेखाचित्र या सहानुभूतिपूर्ण चित्रण नहीं है, बल्कि यह पश्चिम के मार्क्सवादी सौंदर्यशास्त्र और भारत के प्रगतिशील–जनवादी मूल्यों के मेल से निर्मित 'श्रम के सौंदर्यशास्त्र' की सर्वोत्कृष्ट साहित्यिक अभिव्यक्ति है। धूमिल इस कविता के माध्यम से कला और साहित्य के पारंपरिक प्रतिमानों को उलट देते हैं और स्थापित करते हैं कि इस सृष्टि का वास्तविक सौंदर्य महलों की विलासिता में नहीं, बल्कि सड़क के किनारे बैठकर ईमानदारी से पसीना बहाने वाले श्रमिक के हाथों में है। [1]

पारंपरिक सौंदर्यशास्त्र बनाम श्रम का सौंदर्यशास्त्र: एक दार्शनिक विमर्श

'मोचीराम' कविता के भीतर निहित श्रम के सौंदर्यशास्त्र को समझने के लिए सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि पारंपरिक सौंदर्यशास्त्र (Traditional Aesthetics) क्या है और धूमिल की काव्य–दृष्टि उससे किस प्रकार एक युगांतकारी विच्छेद करती है।

पारंपरिक सौंदर्यशास्त्र के रूढ़ प्रतिमान–

प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्र से लेकर पाश्चात्य कलावादी सिद्धांतों तक, सौंदर्य को प्रायः एक अमूर्त, अलौकिक और संभ्रांत बोध के रूप में स्वीकार किया गया है।

- **भारतीय परिप्रेक्ष्य में:** रस सिद्धांत, अलंकार शास्त्र और रीति सिद्धांत के केंद्र में अधिकांशतः राजा, महाराजा, सामंत, देवी–देवता या उच्चवर्गीय नायक–नायिकाएं रही हैं। यहाँ सौंदर्य का तात्पर्य उपवन की कोमलता, नायिका के नख–शिख वर्णन, कमनीय अंगों, चंद्रमा, कमल और रेशमी वस्त्रों से था।
- **पाश्चात्य परिप्रेक्ष्य में:** 'कला कला के लिए' जैसी अवधारणाओं ने कला को सामाजिक उपयोगिता से काटकर उसे केवल आनुभूतिक और इंद्रियगत विलास की वस्तु बना दिया।

इस कुलीन सौंदर्यशास्त्र में श्रम को, मजदूर को, पसीने की दुर्गंध को, फटे कपड़ों को और धूल–धूसरित जीवन को 'असुंदर' या 'काव्य के अयोग्य' मानकर हाशिए पर छोड़ दिया गया। यदि कहीं मजदूरों का वर्णन आया भी, तो वह केवल उच्चवर्गीय कवियों की दया, करुणा या 'तरस' का पात्र बनकर आया, न कि एक स्वाभिमानी चेतना के रूप में।

धूमिल का 'श्रम का सौंदर्यशास्त्र'–

धूमिल इस कविता के माध्यम से इस पूरे सामंती और पूँजीवादी सौंदर्यबोध पर करारा प्रहार करते हैं। श्रम के सौंदर्यशास्त्र का मूल दार्शनिक आधार यह है कि "सृजन ही सौंदर्य का एकमात्र स्रोत है।" इस संसार की समस्त भौतिक सभ्यता, गगनचुंबी इमारतें, सड़के, और विलासिता के साधन अंततः किसी न किसी श्रमिक के श्रम के ही परिणाम हैं। इसलिए:

1. **उपयोगिता ही सुंदरता है:** जो वस्तु या कार्य समाज की वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, वह स्वतः ही सुंदर है।

2. **सजावट का विरोध:** यह सौंदर्यशास्त्र कृत्रिम अलंकरण, रेशमी शब्दों और छद्म आवरणों को उतार फेंकता है। इसमें खुरदरापन, पसीने की गंध, और औजारों की खनक भी अपनी यथार्थवादी गरिमा के कारण अत्यंत सुंदर और आदरणीय बन जाती हैं।

3. **करुणा नहीं, चेतना:** यहाँ श्रमिक दया की भीख नहीं माँगता, बल्कि वह व्यवस्था की आँखों में आँखें डालकर अपनी उपयोगिता और अपने अधिकारों का दावा करता है।

धूमिल की 'मोचीराम' इसी श्रम–सौंदर्यशास्त्र का एक जीवंत दस्तावेज है, जहाँ एक मोची अपनी राँपी और सूए के माध्यम से एक नई जीवन–दृष्टि का निर्माण करता है।

'मोचीराम' कविता का पाठ–विश्लेषण और श्रम–सौंदर्य के विविध आयाम

धूमिल ने 'मोचीराम' कविता में जिस सौंदर्यशास्त्र की रचना की है, वह बेहद जटिल, बहुस्तरीय और गहरे सामाजिक–राजनीतिक सरोकारों से जुड़ी हुई है। कविता के पाठ का विश्लेषण करने पर इसके कई आयाम उभरकर सामने आते हैं:

मानवीय समता का क्रांतिकारी दर्शन

कविता की शुरुआती पंक्तियाँ ही पाठक के भीतर स्थापित पारंपरिक सामाजिक ऊँच–नीच के बोध को एक झटके में ध्वस्त कर देती हैं:

"बाबूजी सच कहूँ— मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिए, हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने मरम्मत के लिए खड़ा है।" [2]

इन पंक्तियों में मोचीराम का जो दर्शन प्रकट हुआ है, वह किसी बड़े विश्वविद्यालय के दार्शनिक से भी अधिक व्यावहारिक और क्रांतिकारी है। वह समाज द्वारा निर्मित जाति, वर्ण, वर्ग, पद, और प्रतिष्ठा के कृत्रिम पैमानों को पूरी तरह खारिज कर देता है। उसके सामने जो भी व्यक्ति आता है, वह केवल 'एक जोड़ी जूता' है जो फटने या टूटने के बाद मरम्मत की प्रतीक्षा में है।

यह दृष्टि श्रम की उस समतावादी प्रकृति को रेखांकित करती है, जहाँ भौतिक आवश्यकताएं सभी मनुष्यों को एक ही धरातल पर ला देती हैं। चाहे कोई कितना भी बड़ा अधिकारी हो, अमीर हो या समाज की नजरों में ऊँची जाति का हो, यदि उसका जूता फटता है, तो उसे फुटपाथ पर बैठे उसी मोचीराम के सामने आना ही पड़ता है। यहाँ श्रम सर्वोच्च सत्ता के रूप में स्थापित होता है और शोषक वर्ग का अहंकार चूर–चूर हो जाता है।

व्यावसायिक गरिमा और कलात्मक एकाग्रता

श्रम का सौंदर्य केवल काम के परिणाम में नहीं, बल्कि काम को करने की प्रक्रिया (Process of Labor) में भी निहित होता है। मोचीराम अपने कार्य को केवल पेट भरने की एक लाचार मजबूरी नहीं समझता, बल्कि वह उसमें एक कुशल कलाकार की तरह डूब जाता है। जब कोई फटा हुआ जूता उसके पास आता है, तो वह उसकी स्थिति का विश्लेषण एक कुशल शल्य–चिकित्सक (Surgeon) की भाँति करता है:

"यहाँ तरह–तरह के जूते आते हैं
और आदमी की अलग–अलग नवैयत
बतलाते हैं
सबकी अपनी–अपनी शक्ल है
अपनी–अपनी शैली है
मसलन एक जूता है:
जूता क्या है– चकत्तियों की थैली है
इसे एक आदमी पहनता है
जिसे चेचक ने चुग लिया है" [3]

यहाँ धूमिल का उपमा–विधान अद्‌भुत है। जूते के फटे हुए हिस्सों को वो ऐसे दर्शातें हैं कि मोचीराम के लिए वह जूता केवल निर्जीव चमड़ा नहीं है। वह उसे एक जीती–जागती मनुष्यता की तरह देखता है।

जूते को सुई से छेदना, तागा पिरोना, और राँपी से अतिरिक्त चमड़े को काटना—इस पूरी शारीरिक और मानसिक प्रक्रिया में एक अद्‌भुत लयबद्धता और एकाग्रता है। यही एकाग्रता श्रम का वास्तविक सौंदर्य है। मोचीराम जब काम करता है, तो उसके हाथों में एक 'पेशेवर शिष्टता' होती है। वह चमड़े के साथ कोई जबरदस्ती नहीं करता, बल्कि उसके स्वभाव को समझकर उसे नया जीवन देता है।

औजारों का सौंदर्यशास्त्रीय और वैचारिक रूपांतरण

पारंपरिक कविताओं में जहाँ नायिका के कंगन, करधनी, नूपुर, या फूलों को सौंदर्य के उपमान के रूप में प्रयुक्त किया जाता था, वहीं धूमिल ने औजारों को कविता के केंद्र में रखकर एक नया प्रतिमान खड़ा किया। 'मोचीराम' कविता में औजार केवल जड़ वस्तुएं नहीं हैं, वे मोचीराम की चेतना और उसकी पहचान का विस्तार हैं:

- **राँपी:** यह केवल चमड़ा छीलने का औजार नहीं है, यह मोचीराम की आँख और उसकी प्रज्ञा का प्रतीक है। कविता की शुरुआत ही इसी बिंब से होती है: "राँपी से उठी हुई आँखों ने मुझे क्षण–भर टटोला..."

- **सूआ, तागा, हथौड़ा और लेई:** ये सभी वस्तुएं सृजन के उपकरण हैं।

धूमिल ने इन खुरदरे और लोहे–लकड़ी के औजारों को कविता में शामिल करके साहित्य का जनतंत्रीकरण किया है। वे यह सिद्ध करते हैं कि एक श्रमिक के औजार किसी राजा के सिंहासन या किसी लेखक की कलम से कम पवित्र और सुंदर नहीं हैं, क्योंकि इन्हीं औजारों के बल पर दुनिया का निर्माण होता है।

सामाजिक यथार्थ और वर्ग–चेतना का प्रकटन

धूमिल मार्क्सवादी विचारधारा से गहरे प्रभावित थे, इसलिए उनकी कविता में श्रम का सौंदर्यशास्त्र केवल अमूर्त कलात्मकता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह तीखी वर्ग–चेतना से जुड़ जाता है। मोचीराम फुटपाथ पर बैठकर केवल जूते नहीं सीता, बल्कि वह उन जूतों के भीतर से झाँकने वाले इंसानों की रग–रग से वाकिफ है:

"एक जूता और है जिससे पैर को
'नाँघकर' एक आदमी निकलता है
सैर को
न अक्लमंद है
न वक्त का पाबंद है
उसकी आँखों में लालच है
हाथों में घड़ी है
उसे जाना कहीं नहीं है
मगर चेहरे पर
बड़ी हड़बड़ी है
वह कोई बनिया है
या बिसाती है
मगर रोब ऐसा कि हिटलर का नाती है" [4]

मोचीराम के पास आने वाले लोग समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं:

1. **शोषित और अभावग्रस्त वर्ग:** वह व्यक्ति जिसके जूते फटे हैं और वह अपनी गरीबी को दुनिया की नजरों से छुपाने के लिए अपनी उँगलियों को सिकोड़ रहा है। मोचीराम के मन में इस वर्ग के प्रति गहरी सहानुभूति और आत्मीयता है।

2. **शोषक और सफेदापोश वर्ग:** वह 'बाबू' जो रौब झाड़ने के लिए जूते पर चमचमाती पॉलिश माँगता है, ताकि समाज में उसका खोखला बड़प्पन बना रहे।

मोचीराम इन दोनों वर्गों की मानसिकता को भली–भाँति समझता है। जब वह उस घमंडी बाबू के जूते को देखता है, तो वह केवल जूते की मरम्मत नहीं कर रहा होता, बल्कि वह उस बाबू के अहंकार का भी नाप ले रहा होता है।

'चमड़े की शराफत' और व्यवस्था की कुरूपता का यथार्थ

'मोचीराम' कविता में 'चमड़ा' एक अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुआयामी प्रतीक बनकर उभरा है। एक स्तर पर चमड़ा वह वस्तु है जिससे जूते बनते हैं और जिसकी मरम्मत करना मोचीराम का पेशा है। परंतु दूसरे स्तर पर, धूमिल ने 'चमड़े' का उपयोग इंसानी खाल, संवेदनशीलता और सामाजिक मुखौटों के रूप में किया है।जब मोचीराम किसी घमंडी ग्राहक के व्यवहार को देखता है, जो उसे एक तुच्छ प्राणी समझकर पैसे फेंकता है, तो मोचीराम विचलित नहीं होता। वह जानता है कि असली गंदगी उसके अपने काले पड़े हाथों में या चमड़े की गंध में नहीं है, बल्कि उस ग्राहक की मानसिकता में है। कविता में एक प्रसंग आता है जहाँ ग्राहक मोचीराम से कहता है कि जल्दी करो, क्योंकि उसे कहीं जाना है। मोचीराम बिना उत्तेजित हुए अपनी प्रतिक्रिया अपने भीतर दर्ज करता है:

"मौसम के नाम पर बिसूरता है
सड़क पर 'आतियों–जातियों' को
बानर की तरह घूरता है
गरज यह कि घंटे भर खटवाता है
मगर नामा देते वक्त
साफ 'नट' जाता है
'शरीफ़ों को लूटते हो', वह गुर्राता है
और कुछ सिक्के फेंककर .... आगे बढ़ जाता है" [5]

धूमिल यहाँ 'चमड़े की शराफत' पर चोट करते हैं। जो लोग खुद को सभ्य, सुशिक्षित और उच्चवर्गीय कहते हैं, वे भीतर से कितने क्रूर, असंवेदनशील और शोषक हैं, इसका पर्दाफाश मोचीराम करता है। इसके विपरीत, मोचीराम जो दिन भर मरे हुए जानवरों के चमड़े को छूता है, वह भीतर से बेहद संवेदनशील और शरीफ है। वह किसी के साथ बेईमानी नहीं करता, वह अपने श्रम की जायज कीमत माँगता है और हर इंसान की इज्जत करता है।
इस प्रकार, धूमिल ने सौंदर्य और कुरूपता की पारंपरिक परिभाषा को पूरी तरह बदल दिया है। समाज जिसे 'गंदा और अछूत' काम मानता है (चमड़े का काम), धूमिल उसे पवित्र और सुंदर सिद्ध करते हैं; और समाज जिसे 'सभ्य और सम्मानित' मानता है (सफेदपोश बाबुओं का वर्ग), धूमिल उनकी आंतरिक कुरूपता और पाखंड को नंगा कर देते हैं।

धूमिल मूलतः व्यंग्य और आक्रोश के कवि हैं। 'मोचीराम' कविता केवल फुटपाथ के यथार्थ तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह छलांग लगाकर सीधे देश की व्यवस्था पर भी चोट करते हैं। आजादी के बाद जो नेता 'संसद' में बैठकर बड़े–बड़े भाषण दे रहे थे, वे वास्तव में आम जनता के श्रम का शोषण करके अपनी तिजोरियां भर रहे थे। मोचीराम इस राजनीतिक पाखंड को अपनी छोटी सी दुकान पर बैठकर साफ–साफ देख रहा है। उसकी वर्ग–चेतना इतनी प्रखर है कि वह जानता है कि कानून, अदालतें और पुलिस सब शोषक वर्ग के हित में काम करते हैं। जब कोई रईस आदमी उसके श्रम का अपमान करता है, तो मोचीराम चुप रह जाता है, क्योंकि वह जानता है कि इस व्यवस्था में उसकी आवाज सुनने वाला कोई नहीं है। परंतु उसकी यह खामोशी लाचारी की नहीं है, बल्कि यह उस गहरे आक्रोश की तैयारी है जो आने वाले समय में एक बड़ी क्रांति का रूप ले सकती है।

भाषाई खुरदरापन और काव्य–शिल्प: श्रम के अनुकूल अभिव्यक्ति

किसी भी कविता का सौंदर्यशास्त्र केवल उसके विचारों में नहीं, बल्कि उसके शिल्प और भाषा में भी प्रकट होता है। धूमिल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने अपनी कविता के कथ्य और रूप में एक अद्‌भुत सामंजस्य स्थापित किया है। चूँकि 'मोचीराम' का विषय खुरदरा, यथार्थवादी और फुटपाथ से जुड़ा हुआ है, इसलिए इसकी भाषा भी सुकोमल या तत्समप्रधान नहीं हो सकती थी।

ठेठ और यथार्थवादी शब्दावली

धूमिल ने कविता में उन शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है जिन्हें पारंपरिक रूप से 'अकाव्यात्मक' माना जाता था। जैसे—राँपी, टाँका, सुई, चमड़ा, लेई, ब्रश, गिटकियाँ, पॉलिश, पेवंद, फटी हुई एड़ी, कील आदि। ये शब्द कविता में आकर एक जीवंत परिवेश का निर्माण करते हैं। जब पाठक इस कविता को पढ़ता है, तो उसे ऐसा महसूस होता है कि वह सचमुच सड़क के किनारे किसी मोची की दुकान के सामने खड़ा है और चमड़े की कड़वी गंध उसकी साँसों में समा रही है।

बिंब विधान का नया प्रतिमान

धूमिल के बिंब बेहद तीखे और सीधे चोट करने वाले हैं। वे छायावादी कवियों की तरह बादलों, तितलियों या फूलों के बिंब नहीं गढ़ते, बल्कि रोजमर्रा की जिंदगी के यथार्थ से बिंब उठाते हैं:

"जैसे 'टेलीफोन' के खंभे पर
कोई पतंग फँसी हो
और खड़खड़ा रही है" [6]

यहाँ दृश्य और श्रव्य बिंबों का ऐसा मिश्रण है जो मोचीराम के श्रम की गतिशीलता को साक्षात कर देता है। पतंग की तरह खटखटाना एक तरह का संगीत पैदा करता है—यह 'श्रम का संगीत' है, जो किसी शास्त्रीधूमिलय संगीत से कम सुंदर नहीं है।

सीधी और कटीली शैली

धूमिल की शैली संवादात्मक और गद्यात्मक है, परंतु उसमें एक आंतरिक लय और तीव्रता है। वे सीधे पाठक से मुखातिब होते हैं और उसमें छिपे हुए पाखंड को झकझोर कर रख देते हैं। उनकी कविता में कोई लाग–लपेट नहीं है, वे जो देखते हैं, उसे पूरी नग्नता और कड़वाहट के साथ बयां कर देते हैं।

समकालीन हिंदी कविता और विमर्शों के परिप्रेक्ष्य में 'मोचीराम' का ऐतिहासिक महत्व

'मोचीराम' कविता केवल अपने समय की ही प्रतिनिधि रचना नहीं है, बल्कि आने वाले समय में हिंदी साहित्य में विकसित होने वाले कई महत्वपूर्ण विमर्शों की मार्गदर्शक भी रही है।

दलित विमर्श की पूर्वपीठिका

यद्यपि धूमिल ने 'मोचीराम' को मुख्य रूप से एक वर्ग (सर्वहारा) के रूप में चित्रित किया है, परंतु भारतीय समाज के यथार्थ में 'श्रम' और 'जाति' का गहरा संबंध है। भारत में जो सबसे कठिन और शारीरिक श्रम करने वाली जातियाँ रही हैं, उन्हें ही अछूत और हाशिए पर रखा गया। मोचीराम का चरित्र इस जातिवादी

क्रूरता और दंश को झेलता है। इसलिए आज का दलित विमर्श धूमिल की इस कविता को अपने इतिहास की एक बेहद मजबूत कड़ी के रूप में देखता है, जहाँ एक दलित पात्र को दया के पात्र के रूप में नहीं, बल्कि एक प्रखर बुद्धिजीवी और दार्शनिक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

प्रगतिशील काव्य–धारा का विकास

प्रगतिशील कविता (प्रेमचंद, निराला, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल) में मजदूरों और किसानों पर बहुत कुछ लिखा गया। निराला की 'वह तोड़ती पत्थर' या 'भिक्षुक' जैसी कविताएँ इसके उदाहरण हैं। परंतु धूमिल ने 'मोचीराम' में इस चेतना को एक कदम और आगे बढ़ाया। निराला की 'तोड़ती पत्थर' को कवि दूर से देख रहा है और उसके प्रति सहानुभूति व्यक्त कर रहा है; जबकि धूमिल की कविता में मोचीराम खुद बोल रहा है, वह खुद अपनी कथा और अपना दर्शन बयां कर रहा है। यह 'परकाया प्रवेश' और श्रमिक को खुद अपनी आवाज देना धूमिल की बहुत बड़ी साहित्यिक उपलब्धि थी। [7]

निष्कर्ष

श्मोचीरामश और श्रम–सौंदर्य की कालजयी प्रासंगिकता

सुदामा पांडेय 'धूमिल' की 'मोचीराम' हिंदी साहित्य की एक ऐसी कालजयी रचना है जो समय बीतने के साथ और अधिक प्रासंगिक होती जा रही है। आज के भूमंडलीकरण (Globalization), उदारीकरण और अत्यधिक पूँजीवादी युग में, जहाँ इंसानी श्रम को मशीनों और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से रिप्लेस किया जा रहा है और कॉरपोरेट संस्कृति में श्रमिक की पहचान पूरी तरह खोती जा रही है, यह कविता हमें पुनः मनुष्यता और श्रम के बुनियादी मूल्यों की ओर लौटने की प्रेरणा देती है।

यह कविता हमें सिखाती है कि:

- सौंदर्य का निर्धारण किसी व्यक्ति के बाह्य आवरण, धन या विलासिता से नहीं, बल्कि उसकी सामाजिक उपयोगिता और रचनात्मक श्रम से होना चाहिए।
- जो हाथ सृजन करते हैं, जो समाज की टूटी हुई व्यवस्था को 'टाँके लगाकर' जोड़ने का प्रयास करते हैं, वे ही सबसे सुंदर और वंदनीय हैं।
- कला का उद्देश्य केवल संभ्रांत वर्ग का मनोरंजन करना नहीं है, बल्कि फुटपाथ के खुरदरे यथार्थ को स्वर देकर व्यवस्था के पाखंड को बेनकाब करना है। धूमिल ने मोचीराम के माध्यम से सर्वहारा वर्ग की जिस अटूट रीढ़, स्वाभिमान और दार्शनिक गरिमा को स्थापित किया है, वह हिंदी कविता के इतिहास में हमेशा 'श्रम के सौंदर्यशास्त्र' का सबसे प्रखर और जगमगाता हुआ प्रतीक बनी रहेगी। जब तक समाज में विषमता रहेगी, जब तक मेहनत करने वालों का हक छीना जाता रहेगा, तब तक मोचीराम की रॉपी समकालीन चेतना को टटोलती रहेगी और सोए हुए समाज को जगाती रहेगी।

संदर्भ

1. राजपाल, डॉ० हुकुमचन्द. (2015). समकालीन बोध और धूमिल का काव्य . पृष्ठ संख्या 51
2. पाण्डेय, डॉ० रत्नशंकर. (2022). धूमिल एक ठेठ कवि. हिन्दी युग्म प्रकाशन .पृष्ठ संख्या 21
3. पाण्डेय, डॉ० रत्नशंकर. (2022). धूमिल एक ठेठ कवि. हिन्दी युग्म प्रकाशन .पृष्ठ संख्या 22
4. पाण्डेय, डॉ० रत्नशंकर. (2022). धूमिल एक ठेठ कवि. हिन्दी युग्म प्रकाशन .पृष्ठ संख्या 22–23
5. पाण्डेय, डॉ० रत्नशंकर. (2022). धूमिल एक ठेठ कवि. हिन्दी युग्म प्रकाशन .पृष्ठ संख्या 23
6. पाण्डेय, डॉ० रत्नशंकर. (2022). धूमिल एक ठेठ कवि. हिन्दी युग्म प्रकाशन .पृष्ठ संख्या 22
7. ज्तपचंजीप D G M. (2023). स्वातंत्रयोत्तर काल में व्यंग्यात्मक हिन्दी कविता के पुरोधा नागार्जुन. शोध दिशा, 61, 255–262. https:/ /doi.org/10.5281/zenodo.18745376